International Journal of Information Movement Vol.I Issue X (February 2017)
Website: www.ijim.in ISSN: 2456-0553 (online) Pages 52-58

रामायण धारावाहिक में मूल्यपरक शिक्षा

संगीता रानी
शोधार्थी, पीएच.डी. (एजूकेशन)
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

रामायण की कहानी इन्सान के दिल में इस विश्वास, इस यकीन को मजबूत करती है कि जब कभी जुल्म की ताकतें मानवता और इन्सानियत को अपने पैरों तले कुचलने की कोशिश करती हैं तो उस वक्त दुनिया में कोई ऐसी ताकत, कोई ऐसी विभूति इन्सान के रूप में आती है जो जुल्म की ताकतों और उनके हथियारों का मुकाबला केवल अपनी सच्चाई आत्मविश्वास और प्यार की भावना से करती है। रामायण की परम्परागत कथा इस बात पर आधारित है कि जब आततायी शक्तियां रावण के रुप में प्रकट होती हैं, जो अपनी ताकत के नशे में चूर धरती को पैरों तले रौंदते चला जा रहा है उस समय धरती, ऋषि, मुनि और देवतागण भगवान विष्णु के पास मदद के लिए जाते हैं और वे उनकी पुकार से द्रवित होकर उनकी सहायता का वचन देते हैं। इस कथा से एक इन्सान में सच्चाई के रास्ते पर चलने की हिम्मत आती है, क्योंकि उसे विश्वास होता है कि आखिर में जीत हमेशा सच्चाई की होती है और सारे संसार में एक ही नारा गूंजता रहेगा, गूंजता रहेगा 'सत्यमेव जयते'।''

रामायण की कथावस्तु और कथानक का एक प्रासंगिक तथा औचित्यपूर्ण भाव है जिसको मानव जाति की अनमोल विरासत कहा जा सकता है और जिसे रामानन्द सागर ने अपने धारावाहिक में कलाकारों के माध्यम से अभिनय का रुप दिया है। उसे इस शोध प्रबन्ध में शोधकर्ता ने मूल्यों के सम्प्रत्यय और अवधारणाओं में देखा है। इसीलिए खलनायक या दुरात्माओं द्वारा कथित किसी संवाद या विवादास्पद चरित्र द्वारा दिये गए उपदेश को यहाँ उधृत नहीं किया जा रहा है। यह कहना उचित होगा कि रामायण में ऐसे भी पात्र हैं जिनकी विद्वता, बुद्धिमत्ता और जीवन मूल्यों को कम नहीं आँका जा सकता परन्तु भारतीय जीवन दृष्टि, जीवन दर्शन एवं मानव संस्कृति के परिप्रेक्ष में वे उचित नहीं प्रतीत होते जैसे–रावण, मंदोदरी, बालि, कुम्भकर्ण, विभीषण या दैत्य दानव वर्ग के प्राणी आदि।

रामायण भारतीय संस्कृति, जीवन मूल्य और आदर्शों की प्राण प्रतिष्ठा करने वाला ऐसा ग्रन्थ है जो कई सदियों से मानव जीवन को आगे बढ़ने के संकेत करता रहा है और भविष्य में युगों–युगों तक मानव मूल्यों को सम्प्रेषित करेगा। इसी ग्रन्थ को आधार बनाकर रामानन्द सागर ने जिस धारावाहिक को जनमानस के सामने रखा उसी के संदर्भ में मानवीय मूल्यों का विवेचन इस प्रकार है–

1.1 आदर्श गुण :

आदर्श गुण :– समानार्थी शब्द– प्रतिमान, मानक, दृष्टान्त, उदाहरण।[1]

रामायण के प्रमुख पात्र श्रीरामचन्द्र के समान मर्यादा रक्षक जैसा अन्य उदाहरण विश्व में अन्यत्र आज तक कोई नहीं हुआ। जब तक विश्व में सभ्य समाज रहेगा, श्रीराम अनुकरणीय रहेंगे। श्रीराम के जीवन वृत्त से निश्चय ही हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि उनका जन्म (अवतार) धर्म की रक्षा और निर्बलों के उद्धार के लिये ही हुआ। वे सदा सबके सामने अपने को एक सदाचारी व्यक्तित्व के आदर्श के रुप में प्रस्तुत करते रहे। महर्षि वाल्मीकि ने रामायण में श्रीराम के जिन जीवन आदर्शों का संकेत किया है वे आगे के श्लोकों में दिये जा रहे हैं। ये सभी आदर्श और उनके गुण ही मानव जीवन के मूल्य हैं।

इन्हीं मूल्यों को श्री रामानन्द सागर ने अपनी कथा का आधार बनाया जो आगे इसी अध्याय में स्थान–स्थान पर संकेत के रूप में दिये जा रहे हैं। श्री रामचन्द्र में रामायण कालीन सभी आदर्शों, गुणों का पूर्ण विकास हुआ था। संसार में इतने सारे महान् गुण अन्य किसी एक ही व्यक्ति में पाए गए हों ऐसा उदाहरण शायद ही कहीं और मिले। मर्यादा पालन में तो उनकी कोई अन्य उपमा ही नहीं थी और इसीलिए वे मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाये। ऐसा वचन, आचरण तथा व्यवहार जो सामाजिक–सांस्कृतिक स्थापनाओं, परम्पराओं तथा मान्यताओं के अनुरूप किया जाय उसे मर्यादापालन कहा जाता है। मानव मात्र के कल्याण के लिए कर्तव्यों और मर्यादाओं की व्यवस्था उन्होंने अपने जीवन में स्वयं चरितार्थ की। उनके बाद के युगों में विषेशतः कलियुग में उत्तरोत्तर हो रही आदर्शों की अवहेलना से सामाजिक सद्भाव व सामाजिक जीवन मूल्यों का ह्रास हो रहा है। दूरदर्शन पर प्रसारित धारावाहिक रामायण में श्री राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के साक्षात् अवतार के रूप प्रस्तुत किया

गया है जिनके गुण न केवल भारतीयों के लिए बल्कि विश्व के समस्त सभ्य समाज के व्यक्तियों के लिए अनुकरणीय हैं और युग युगान्तर तक रहेंगे।

आदर्श गुणों के रूप में संसार की पतिव्रता महिलाओं में पति–परायणा सीता का स्थान बहुत ऊँचा है। रामायण में वर्णित समस्त स्त्री–चरित्रों में सीताजी का चरित्र सर्वोत्तम, सर्वथा आदर्श और अनुकरणीय है। सीताजी की तरह असाधारण पतिव्रत, त्याग, शील, निर्भयता, शान्ति, क्षमा, सौहार्द, सहनशीलता, धर्मपरायणता, नम्रता, संयम, सेवा, सदाचार, व्यवहार–पटुता, साहस, शौर्य आदि गुण एक साथ संसार की दूसरी किसी भी स्त्री में शायद ही मिल सकें। उनके जीवन की कोई भी घटना ऐसी नहीं है, जिससे हमारी माताओं, बहुओं, बहनों एवं बेटियों को उत्तम शिक्षा न मिले। संसार में आज तक जितनी स्त्रियाँ हुई हैं, उनमें सीताजी को सर्व–शिरोमणि पतिव्रता कहने में कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

इसी प्रकार लक्ष्मण का जीवन हर वर्ग के व्यक्ति के लिए प्रासंगिक है और मानव मात्र के लिए अनुकरणीय और हितकारी है। लक्ष्मण ब्रह्मचर्य–व्रत का पालन करने वाले, धीर, वीर, तेजस्वी, पराक्रमी और इन्द्रिय–विजयी थे। ये बड़े ही सुन्दर, सरल, तितिक्षु, निर्भय, निष्कपट, त्यागी, पुरुषार्थी, तपस्वी, सेवक, सत्यव्रती, बुद्धिमान् और नीति–निपुण थे। श्रीराम में उनका अपूर्व प्रेम था। श्रीराम की शरण में रहकर उनकी सेवा करना ही लक्ष्मण अपना मुख्य धर्म और कर्तव्य समझते थे। सीता हरण के समय किष्किंधा से प्राप्त आभूषणों की पहचान करने के लिए राम द्वारा पूछने पर लक्ष्मण ने कहा – 'भैया! मैं सीता के बाजूबन्ध और कुण्डलों को नहीं पहचानता, परन्तु उनके नूपुरों को अवश्य पहचानता हूँ; क्योंकि मैं नित्य उनके चरणों में प्रणाम करते हुए नूपुरों को देखा करता था।' इस भावाभिव्यंजना को महर्षि वाल्मीकि ने किष्किन्धा काण्ड में बड़ी लालित्यपूर्ण शब्दावली में चित्रित किया है –

नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले।।22।।
नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात्। 23।[2]

शत्रुघ्न का चरित्र भी अपने आप में निराला ही है। शत्रुघ्न एक मौनकर्मी, प्रेमी, सदाचारी, मितभाषी, सत्यवादी, विषयविरागी, सरल, तेजपूर्ण, गुरुजन के अनुगामी और वीर पुरुष के रूप में राम के अनुज थे। जैसे लक्ष्मण हाथ में धनुष लेकर श्रीराम की रक्षा करते हुए उनके पीछे–पीछे चलते थे, उसी तरह लक्ष्मण के छोटे भाई शत्रुघ्न भी भरत के साथ रहते थे।' अतः श्रीभरतजी का और इनका चरित्र साथ ही चलता है। वशिष्ठ जी ने चारों भाईयों का नामकरण उनकी प्रकृति और गुणों के आधार पर किया था। उन्होंने कहा था–योगी जिसके ध्यान में सदा रमते रहते हैं वे राम हैं। उत्तम लक्षणों से युक्त लक्ष्मण हैं। प्रजा का भरण–पोषण करने वाले भरत एवं शत्रुओं का विनाश करने वाले शत्रुघ्न हैं। शत्रुघ्न ने लौकिक रूप से किसी का वध नहीं किया पर वे काम, क्रोधादि आंतरिक शत्रुओं पर विजय कर चुके थे।

रामायण में आदर्श को लेकर जो मानक स्थापित किये गए हैं उसे रामायण धारावाहिक में बहुत हृदयग्राही तरीके से चित्रित किया गया है। यदि वर्तमान पाठ्यक्रम और शिक्षा व्यवस्था में मातृभक्ति, पितृभक्ति, भ्रातृप्रेम, शत्रु प्रशंसा, ऊँच–नीच की भावना का त्याग, पति या पत्नी के प्रति कर्त्तव्य के पाठ प्रारम्भ से बच्चों को पढ़ाये जाए तो सम्पूर्ण शिक्षा का औचित्य और उसकी सार्थकता सिद्ध हो जाती है।

1.2 मातृ–भक्ति :

मातृ–भक्ति :– समानार्थी शब्द – मातृश्रद्धा, मातृ सेवा, मातृ पूजन, मातृवन्दन, मातृवत्सलता, मातृप्रेम।[3]

श्रीराम की मातृ–भक्ति में श्रद्धा और विनम्रता निहित थी। विमाता कैकेयी के अप्रिय व्यवहार किये जाने पर भी उनके प्रति श्रीराम का व्यवहार तो सदा भक्ति और सम्मान से पूर्ण ही रहा और उन्होंने पिता दशरथ एवं माता कैकेयी की आज्ञा से चौदह वर्षों का वनवास स्वीकार किया। इसका सभी रामायण और राम कथा के ग्रन्थों में उल्लेख है। इसे रामानन्द सागर ने जिन शब्दों में व्यक्त किया है उसे यहाँ उधृत करना आवश्यक होगा–

राम – (कैकयी से) बस इतनी सी बात पर इतना विवाद था। ये तो बड़ी प्रसन्नता की बात है माँ कि मुझे माता और पिता दोनों के वचनों का पालन करने का ऐसा अवसर मिला जो किसी पुत्र को बड़े भाग्य से मिलता है।[4]

चित्रकूट से लौटते समय भरत से राम ने कहा था कि 'भाई भरत! माता कैकेयी के साथ सदा वैसा ही बर्ताव करना, जैसा अपनी पूजनीया माता के साथ करना चाहिये' और उसी समय शत्रुघ्न से भी कहा था– 'भाई! मैं तुम्हें अपनी और सीता की शपथ दिलाकर कहता हूँ कि तुम कभी माता कैकेयी पर क्रोध न करना, सदा उनकी सेवा ही करते रहना।' श्रीराम की अपनी अन्य माताओं के प्रति श्रद्धा और भक्ति अनुकरणीय रहीं। ऐसा आदर व समभाव का व्यवहार मानव मात्र के लिए मातृ भक्ति की शिक्षा ग्रहण करने योग्य है। रामायण में ऐसा प्रसंग है कि–

वन गमन से पूर्व लक्ष्मण अपनी माता से कहते हैं – हे माता! मैं आपसे शपथ पूर्वक कहता हूँ कि पूज्य भाई श्रीराम में मेरा हार्दिक दृढ़ अनुराग है। यदि श्रीराम जलती हुई आग में या घोर जंगल में प्रवेश करें तो आप मुझको उनसे पहले ही वहाँ प्रविष्ट हुआ समझें।

अनुरक्तोऽस्मि भावेन भ्रातरं देवि तत्त्वतः।
सत्येन धनुषा चैव दत्तेनेष्टेन ते शपे।।16।।
दीप्तमग्निमरण्यं वा यदि रामः प्रवेक्ष्यति।
प्रविष्टं तत्र मां देवि त्वं पूर्वमवधारय।।17।।[5]

राम ने अपनी तीनों माताओं के प्रति जिस उदार भावना का परिचय दिया वह आज तक उसी रूप में आदर्श समाज के लिए स्वीकृत प्रतिमान हैं। छोटे बच्चों से लेकर बड़े विद्यार्थियों को भी सामाजिक ताने–बाने में अपनी व्यवस्था सुदृढ़ करने में ''मातृ देवो भवः'' का पाठ पढ़ाना चाहिए। राम ने कौशल्या की तुलना में कैकयी को जो महत्व दिया वह एक कथानक भले हो लेकिन संयुक्त परिवार प्रथा के महत्व को प्रतिपादित करने वाला महामन्त्र है।

1.3 पितृ–भक्ति :

रामकथा में जहां वाल्मीकि एवं तुलसी की कृतियों को आधार बनाकर रामायण धारावाहिक तैयार किया गया वहीं इस बात को भी धारावाहिक में प्रभावी ढ़ग से प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया ताकि समाज के लोग समसामयिक परिप्रेक्ष्य में सभी पात्रों के पावन एवं उदात्त चरित्र को जीवन में उतारें। वाल्मीकि रामायण के अनुसार माता कैकेयी से बातचीत करते समय राम कहते हैं 'मैं महाराज के कहने से आग में भी कूद सकता हूँ, तीव्र विष का पान कर सकता हूँ और समुद्र में भी गिर सकता हूँ, क्योंकि पिता की सेवा और उनकी आज्ञा का पालन करने से बढ़कर संसार में दूसरा कोई धर्म नहीं है '–

(अहं हि वचनाद् राज्ञः पतेयमपि पावके।
भक्षयेयं विषं तीक्ष्णं पतेयमपि चार्णवे।।28।।
न ह्यतो धर्मचरणं किञ्चिदस्ति महत्तरम्।
यथा पितरि शुश्रूषा तस्य वा वचनक्रिया।।29।।)[6]

माता कौशल्या से भी उन्होंने कहा है 'मैं चरणों में सिर रखकर आपसे प्रसन्न होने के लिये प्रार्थना करता हूँ। मुझमें पिता के वचन टालने की शक्ति नहीं है। अतः मैं वन को ही जाना चाहता हूँ '–

नास्ति शक्तिः पितुर्वाक्यं समतिक्रमितुं मम।
प्रसादये त्वां शिरसा गन्तुमिच्छाम्यहं वनम्।।30।।[7]

इसी पितृभक्ति को धारावाहिक रामायण में इस प्रकार कहा गया है –

राम (लक्ष्मण से) पुत्र होने के नाते मेरा एक ही कर्तव्य है कि मैं वही काम करूं जिसमें उनके सत्य, उनके धर्म, उनकी प्रतिज्ञा की क्षति न हो, बल्कि उनकी कीर्ति बढ़े उनका यश मलिन न हो।.....लक्ष्मण! हमारे पिता जैसे पिता तो किसी को बड़े भाग्य से ही मिलते हैं।..... पुत्र का धर्म है कि वह अपने पिता को भगवान की तरह पूजे क्योंकि पिता मनुष्य का प्राणदाता होता है। जो पिता की भक्ति नहीं करते देवता तो क्या स्वयं भगवान भी उनकी पूजा स्वीकार नहीं करता।[8]

1.4 भ्रातृ–प्रेम :

यह कितना गहरा भ्रातृप्रेम है कि राजतंत्र में रहते हुए भी दशरथ के उत्तराधिकारी के रुप में कोई भाई राजा नहीं बनना चाहता। सभी भाई एक–दूसरे को राज्य देना चाहते हैं। इस प्रसंग को मानस में गोस्वामी जी ने जिस रूप में लिखा है उसी रूप में रामानन्द सागर ने दूरदर्शन पर चित्रित भी किया है –

राम – (लक्ष्मण से) प्रथम तो यह कि हम चारों भाई एक साथ जन्मे, बड़े हुए, एक साथ हमारे विवाह हुए फिर ये राज्याभिषेक केवल एक भाई का ही क्यों?

लक्ष्मण (राम से) क्योंकि राजा की यही परम्परा है। ज्येष्ठ भ्राता ही राज्य का उत्तराधिकारी होता है।[9]

परन्तु रामकालीन यह आदर्श महाभारत काल तक आते –आते क्षीण हो गया और यह मर्यादा समाप्त हो गई।

धारावाहिक रामायण में राम भरत के संवाद और पादुकाओं सहित भरत के लौटनें का अत्यन्त ही सजीव और भक्तिपूर्ण चित्रण किया गया है। पात्रों के अभिनय कला का उत्कृष्ट रूप अनायास ही दर्शकों को भाव विह्वल कर देता है। यह दिव्य दर्शन मानव मूल्यों से ओत–प्रोत भ्रातृ प्रेम की स्वाभाविक प्रस्तुति है।

उधर रावण के साथ युद्ध के दौरान शक्तिबाण से लक्ष्मण के मूर्छित हो जाने पर श्रीराम जिस प्रकार दुखी हुए, विलाप किया, उससे छोटे भाई लक्ष्मण पर उनके अनन्य प्रेम का परिचय मिलता है। इसे धारावाहिक रामायण में इस प्रकार प्रदर्शित किया गया –

राम– (लक्ष्मण के शक्ति बाण लगने पर) नहीं लक्ष्मण, नहीं मेरे भैया तुम इसलिए तो मेरे साथ वन में नहीं आये। यदि ऐसा हुआ तो अनर्थ हो जायेगा यह धरती फट जायेगी और राम उसमें समा जायेगा। यदि लक्ष्मण नहीं रहेगा तो ये राम भी नहीं रहेगा।..... लक्ष्मण के साथ जीवन–मरण का यह संघर्ष समाप्त हो गया। राम, राम नहीं रहा केवल उसका अवशेष मात्र है, अवशेष मात्र हैं।[10]

जो भाई अपने लिये सब कुछ छोड़कर मरने को और सब तरह का कष्ट सहने को तैयार हो, उसके लिये चिन्ता और विलाप करना केवल भारतीय इतिहास और संस्कृति में ही मिलता है।

1.5 कृतज्ञता :

महाराजा दशरथ द्वारा वशिष्ठ एवं विश्वामित्र के कार्यों को कृतज्ञ भाव से स्वीकार करने, जनक–दशरथ के संबंधों में कृतज्ञता का भाव, माता–पिता–गुरु की सेवा को कृतज्ञता के रुप में अपनाना, शबरी अहिल्या द्वारा अपने उद्धार को कृतज्ञता के रूप में स्वीकार करना, अदि अनेक प्रसंग रामायण में हैं जहां कृतज्ञता जैसे मूल्य की शिक्षा मिल सकती है। वास्तव में श्रीराम में अपार शक्ति थी, प्रेम की वृद्धि के लिये साधारण सेवा को भी बड़े–से–बड़ा रूप देकर वे अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

सीता को खोजते–खोजते जब श्रीराम रावण द्वारा आहत कर गिराये हुए जटायु की दशा देखते हैं, 'जिसके पंख कटे हुए थे, समस्त शरीर लहू–लुहान हो रहा था, ऐसे गीधराज जटायु को हृदय से लगाकर श्रीरघुनाथजी 'प्राणप्रिया जानकी कहाँ गयी?' इतना कहकर पृथ्वी पर गिर पड़े।'

निकृत्तपक्षं रुधिरावसिक्तं तं गृध्रराजं परिगृह्य राघवः।
क्व मैथिली प्राणसमा गतेति विमुच्य वाचं निपपात भूमौ।।29।।[11]

1.6 पराक्रम :

रामायण एक प्रकार से अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध पर आधारित महाकाव्य है इसमे सभी नायक किसी न किसी रूप में अपने बल, पराक्रम एवं पौरुष के लिए प्रसिद्ध हैं। राम ने रावण का वध किया, मेघनाद का लक्ष्मण ने वध किया। भरत ने सींक के बाण से हनुमान को अपनी वीरता का परिचय दिया। हनुमान, सुग्रीव, अंगद, जामवन्त आदि भी अप्रतिम योद्धा थे। जटायु महायोद्धा था। भक्त होते हुए भी विभीषण भी युद्ध कला में प्रवीण थे। कुंभकर्ण, रावण, मेघनाद सभी पराक्रमी थे, लेकिन राम की ओर से लड़ रहे सभी वीर सत्य एवं न्याय के लिए युद्धरत थे जबकि रावण, मेघनाद, कुंभकरण, मारीच, सुबाहु खर दूषण आदि लंका के योद्धा अपनी वीरता और पराक्रम का उपयोग मानव को कष्ट पहुंचाने के लिए करते थे। इसी दार्शनिक अवधारण से प्रेरित होकर रामानन्द सागर ने स्वयं सेवक एवं पराक्रमी को अपने धारावाहिक में गहरे भाव से निरुपित किया है। श्रीरामचन्द्र के बल, पराक्रम, वीरता और शस्त्रकौशल का अन्य उदाहरण दुर्लभ है। सम्पूर्ण रामायण में इसका सजीव वर्णन भरा पड़ा है। विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करते समय उन्होंने बड़ी सहजता से ताड़का का वध कर दिया–

चले जात मुनि दीन्हि देखाई। सुनि ताड़का क्रोध करि धाई।
एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा। दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा।[12]

मेघनाथ के वध के बाद लक्ष्मण ने श्रीराम के पास आकर सौंपे गए कार्य के प्रति विनम्र भाव से कृतज्ञता प्रकट की। यह बताने की आवश्यकता नहीं कि राम में पराक्रम था, किन्तु आज के बच्चों को पराक्रमी कैसे बनाया जाए? इसका प्रयास किया जाना चाहिए। पराक्रम का अर्थ केवल शारीरिक वीरता का प्रदर्शन नहीं बल्कि धैर्य और विनम्रता के साथ अपने शौर्य का प्रदर्शन करना ही पराक्रम है। राम सम्पूर्ण पराक्रम के होते हुए अहंकार से मुक्त थे और अपनी सफलता का श्रेय सदैव दूसरों को देते थे। आज का छात्र और शिक्षक अपनी उन्नति और उत्कर्ष का श्रेय स्वयं लेना चाहता है। इसलिए आज की शिक्षा में मूल्यों का ह्रास दिखायी देता है।

1.7 धर्मरक्षक :

श्रीरामचन्द्र के समान धर्म रक्षक विश्व में अन्य कोई नहीं हुआ। उनका आविर्भाव धर्म की रक्षा और लोकों के उद्धार के लिये ही हुआ था। वे सदा सबके सामने अपने को एक सदाचारी व्यक्तित्व के आदर्श के रूप में प्रस्तुत किए। आम

जन के लिए उनका प्रत्येक कर्म अनुकरणीय है। रामायण काल में ही नहीं अपितु आज भी हर वर्ग के लिए राम का रामत्व प्रासंगिक है।

किसी प्रकार के प्रलोभन से, भय से या बड़ी भारी विपत्ति आने पर भी धर्म का त्याग नहीं करना चाहिये –इस बात की शिक्षा हमें सीता के जीवन से भी मिलती है। लंका की अशोक–वाटिका में सीता को अपने धर्म से हटाने के लिये रावण ने हर सम्भव चेष्टा की। सीता को अपना वैभव दिखाता, बड़े–बड़े प्रलोभन देता, अनुनय–विनय भी करता, पर सीता अपने धर्म पर अटल रहकर रावण का नीतियुक्त शब्दों में सदा तिरस्कार ही करती रहीं। इसे दूरदर्शन पर धारावाहिक में इस प्रकार व्यक्त किया है –

सीता– (रावण से) रावण जूगनु की चमक से सरोवर में कुमुदनी नहीं खिलती। याद रखो जिस प्रकार सूर्य से उसकी प्रभा अलग नहीं हो सकती उसी प्रकार मैं भी श्रीराम से अभिन्न हूं। जिस प्रकार एक पापी पुरुष सिद्धि के लिए पूजा का अधिकारी नहीं होता उसी प्रकार तुम भी मेरी याचना के योग्य भी नहीं हो। मैं पतिव्रता हूं। मैंने एक बड़े कुल में जन्म लिया है और मेरा एक पवित्र कुल में सम्बन्ध हुआ है। मुझसे कोई लोकनिन्दक कार्य सम्भव नहीं हो सकता। तुम अपना मन मुझसे हटा लो नहीं तो इसी पाप की आग में तुम अपनी स्वर्णलंका समेत भस्म हो जाओगे।[13]

इस दृढ़ निर्णय से हारकर रावण ने मायावी शक्ति का प्रदर्शन किया तथा सीता को राम का कटा सिर दिखाया फिर भी सीता के मन में धर्म से विमुख होने की भावना नहीं बनी। उनका मन दिन–रात श्रीराम के चरणों में ही लगा रहता था। धर्म–त्याग की तो बात ही क्या, सीता ने विपत्ति से बचने के लिये छल से भी कभी अपने बाहरी बर्ताव में भी कोई दोष नहीं आने दिया। उनके निर्मल और धर्म से परिपूर्ण मन में कभी कोई बुरी स्फुरणा भी नहीं आयी।

महिलाओं के लिए यह शिक्षा ग्रहणीय है कि पति के वियोग में भीषण आपत्ति आने पर भी पति का ही ध्यान करें। मन में भगवान और धर्म के बल पर पूरी वीरता, धीरता और साहस बनाये रखें। स्वधर्म–पालन के लिये प्राणों की भी आहुति देने के लिये सदा तैयार रहें। इसी प्रकार हम देखते हैं कि यद्ध में लक्ष्मण को शक्तिबाण से मूर्च्छित होने पर लंका से सुषेण वैद्य को लाया जाता है जिसने मानव धर्म के कारण लक्ष्मण का उपचार कर उन्हें मूर्च्छा से जाग्रत और स्वस्थ किया। मानस में ऐसा प्रसंग आता है जिसका धारावाहिक में चित्रण है –

जामवंत कह बैद सुषेना। लंकाँ रहइ को पठई लेना।
धरि लघुरुप गयउ हनुमंता। आनेउ भवन समेत तुरंता।।[14]

1.8 क्षमा :

बड़े पराक्रमी होने पर भी राम में धैर्य, साहस के साथ वात्सल्य भाव भी था। वे इतने क्षमाशील थे कि वे अपने प्रति किये हुए किसी के अपराध को अपराध ही नहीं मानते थे। उन्होंने जहाँ कहीं भी क्रोध और युद्ध की लीला की है, वह अपने आश्रितों और साधु पुरुषों की रक्षा के लिए थी। सामान्य व्यक्ति मंथरा, कैकेयी के कृत्यों को अपराध मानते हैं, राम ने उसे भी अन्यथा नहीं लिया। राम के इसी गुण धर्म का पालन सीता ने भी किया। रावण का वध और राम की विजय होने के बाद विजय की खबर देने के लिये जब हनुमान सीता के पास गये, उस समय उन्होंने सीता से यह भी कहा कि–'जिन दुष्ट राक्षसियों ने आपको पहले बहुत धमकाया, डराया और दुःख दिया है, उन सबको मैं मार डालता हूँ; आप मुझे आज्ञा दें।' सीता राम के आदर्श से भिन्ना नहीं थी और उन्होंने कहा 'वानरश्रेष्ठ! मनुष्य अपने किये हुए कर्मों का फल भोगता है। इसमें दूसरों का कोई दोष नहीं है। अतः तुम राक्षसियों के मारने की बात मत कहो। कोई पापी, धर्मात्मा या वध के योग्य अपराध करने वाला ही क्यों न हो, साधु को तो सब पर दया ही करनी चाहिये, क्योंकि अपराध सभी से होते आये हैं' –

पापानां वा शुभानां वा वधार्हाणामथापि वा।
कार्य कारुण्यमार्येण न कश्चिन्नापराध्यति।45।[15]

वाल्मीकि रामायण का यह श्लोक पाप पुण्य के बीच संतुलन, क्षमा, दया एवं धर्म का कार्य करता है। कैकयी व मंथरा को कौशल्या, सुमित्रा, भरत सभी ने क्षमा कर दिया, परन्तु ऐसे अनेक प्रसंग हैं जिनसे स्पष्ट होता है कि लंका में अपराध करने वाले की सीधे ही हत्या कर दी जाती थी।

राम क्षमा की प्रतिमूर्ति थे उन्होंने क्षमा मांगने वाले व्यक्ति का सदैव सम्मान किया और अपराधी को भी क्षमादान दिया। चाहे कोई भी राक्षस प्रवृत्ति का व्यक्ति रहा हो उन्होंने उसे क्षमा किया। वीर होते हुए भी शरण में आये व्यक्ति को राम अपना मित्रवत् स्नेह देते थे। यह क्षमाशीलता का उदाहरण है।

1.9 सहिष्णुता :

वन–गमन के समय जब कैकेयी ने सीता को वनवास के योग्य वस्त्र पहनने के लिये दिये, उस समय रनिवास की अन्य महिलाओं एवं राजा दशरथ के दुःख का तो कहना ही क्या, वसिष्ठ–सरीखे तपोनिष्ठ महर्षि का मन भी क्षुब्ध हो उठा था और उन्होंने बड़े कठोर शब्दों में कैकेयी की भर्त्सना की परन्तु सीता इससे बिल्कुल विचलित नहीं हुई प्रत्युत सास के आज्ञानुसार उन वस्त्रों को उन्होंने सहज ही धारण किया और वशिष्ठ जी की आज्ञा होने पर भी अपने निश्चय को नहीं बदला। इसे रामानन्द सागर ने इस प्रकार चित्रित किया है–

वशिष्ठ– (कैकेयी से) ठहरो देवी कैकेयी! तुम्हारे त्रिया हठ ने पति की मर्यादा को नष्ट कर दिया है परन्तु रघुवंश की मर्यादा तो भंग न करो। सीता तुम्हारी पुत्रवधू है। रघुवंश की शोभा, सूर्य वंश की लाज उसके उत्तम वस्त्र और आभूषण उतार कर उसे मुनि वस्त्र देते हुए हाथ नहीं काँपते। तुमने केवल राम के लिए वनवास का वर मांगा था इसलिए सीता राजकुमारियों की तरह पूरे राजसी ठाठ बाट से वन में रहेगी। यह हमारी आज्ञा है।

सीता– क्षमा पित्र देव, क्षमा गुरुदेव। आप गुरुजनों से मेरा केवल इतना ही निवेदन है जिसका पति तपस्वी वेश में रहेगा उसकी पत्नि राजसी ठाठ से जीवन बिताये क्या उसको शोभा देगा। क्या यह स्त्री धर्म के अनुकूल है? क्या इससे मेरे पिता की शोभा बढ़ेगी या मेरे ससुराल के कुल का यश बढ़ेगा?

सीता– (कैकेयी से) – माताजी मुझे ये वस्त्र प्रदान कीजिए और सिखाइये कि इन्हें कैसे पहना जाता है?[16]

इस प्रसंग से यह शिक्षा मिलती है कि सास या तत्सम ज्येष्ठजन कुछ कड़ी बात भी कहें या प्रतिकूल बर्ताव करें तो भी अनुजों को उसे खुशी के साथ सहन करना चाहिये और विपरीत स्थिति में अपने पति की स्थिति/दशा के अनुकूल ही रहना चाहिए। समुद्र की प्रार्थना करना, रावण को बचाव का अवसर देना, परशुराम को सम्मान देना आदि राम की सहिष्णुता के परिचायक कार्य हैं। लंका का कष्ट सहते हुए भी राक्षसियों को कुछ न कहना सीता की सहिष्णुता है। कैकेयी का प्रतिकार नहीं करना कौशल्या की सहिष्णुता है। रावण द्वारा अपमानित विभीषण की सहिष्णुता भी प्रसशंनीय है। इन सबका संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित चित्रण रामायण धारावाहिक की लोकप्रियता प्रतिपादित करता है।

राम में शौर्य और धैर्य के साथ सहिष्णुता का भाव बहुत है। समुद्र के सामने भी वे विनम्रता प्रदर्शित करते हैं। शत्रु को भी संभलने का अवसर देते हैं। आज के बच्चों में उग्रता, अहंकार और क्रोध का भाव बढ़ता जा रहा है। इसे रोकना ओर कम करना आवश्यक है। राम कथा में ऋषियों, मुनियों से प्राप्त शिक्षा ने राम को सहिष्णु बनाया था। विद्यार्थियों में सहिष्णुता का भाव पनपाने और बढ़ाने में शिक्षकों की बहुत बड़ी भूमिका होती है।

1.10 निर्भयता :

निर्भयता का मूल्य राम कथा में सर्वत्र है। दशरथ, रामआदि चारों भाई, हनुमान अंगदादि, बालि–सुग्रीव, सभी अपने व्यवहार में निर्भय है। लंका में सीता की निर्भयता, रावण के सामने हनुमान, अंगद आदि की निर्भयता सबका सजीव चित्रांकन धारावाहिक रामायण में किया गया है।

इसके पूर्व विश्वामित्र को निर्भय यज्ञ करने का राम द्वारा दिया गया आश्वासन गुरुशिष्य की एक पावन तथा त्यागमयी भावना का दृष्टान्त है। सीता के तेज और निर्भयता का नमूना भी देखिये कि जिस अतुल पराक्रमी रावण का नाम सुनकर देवता लोग भी घबड़ा जाते थे, उसी को सीता निर्भयता के साथ कैसा उत्तर देती हैं। वे रावण के दाँव में पड़ी हुई भी अत्यन्त क्रोध से उसका तिरस्कार करती हुई कहती हैं–'तू सियार है और मैं सिंहनी हूँ, मैं तेरे लिये सर्वथा दुर्लभ हूँ। फिर भी क्या तू मुझे पाने की आकांक्षा रखता है? जैसे कोई सूर्य की प्रभा को नहीं छू सकता उसी प्रकार तू मुझे छू भी नहीं सकता। तेरी इतनी हिम्मत कि तू श्रीराम की पत्नि का अपहरण करना चाहता है! अवश्य ही तू सूर्य और चन्द्रमा को हाथ से पकड़ने की अभिलाषा करता है। यदि तू श्रीराम की प्यारी पत्नी पर अत्याचार करना चाहता है तो निश्चय ही जलती हुई आग को देखकर भी उसे कपड़े में बाँधकर ले जाने की इच्छा करता है और लोहे की तीखी सलाखों की नोंक पर विचरना चाहता है।'

त्वं पुनर्जम्बुकः सिंहीं मामिहेच्छसि दुर्लभाम्।
नाहं शक्या त्वया स्प्रष्टुमादित्यस्य प्रभा यथा।37।[17]

1.11 गृहस्थ–धर्म :

सीताजी जब लंका से अयोध्या लौटीं, तब आते ही बड़ी–बूढ़ी स्त्रियों और सभी सासुओं को प्रणाम करती हैं,

सासुन्ह सबनि मिली बैदेही। चरनन्हि लागि हरषु अति तेही।
देहिं असीस बुझि कुसलाता। होइ अचल तुम्हार अहिवाता।[18]

सीता घर में रहकर देवताओं का पूजन करती हैं तथा कैकेयी सहित सभी सासुओं की समानभाव से सेवा करती हैं। इस प्रकार वे घर के सभी कार्य सुचारु रूप से सम्पन्न करके सबको मुग्ध कर देती हैं। सीताजी भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न– इन सभी देवरों को पुत्रवत समझती थीं और सब से अपनत्व में किसी प्रकार का भेद–भाव नहीं रखती थीं। इससे यह शिक्षा मिलती है कि नारी जीवन और पुरुष मर्यादा के बीच एक अस्तित्व पूर्ण समन्वय सृष्टि की एक विशेषता है। इसे वाल्मीकि एवं व्यास या तुलसी जैसे वैष्णव भक्तों ने बड़ी सहजता से पहचाना है। भारत में वैसे भी गृहस्थ जीवन को सभी धर्मो एवं पुरुषार्थों से महत्त्वपूर्ण माना गया है। हमारे शास्त्रों में यहां तक उल्लेख है कि बिना गृहस्थ जीवन पूर्ण किये व्यक्ति को मोक्ष नहीं मिलता।

सम्पूर्ण राम कथा में समाज राज्य के साथ गृहस्थ धर्म को जोड़ा गया। राजा सेवक दोनों अपना कार्य न्यायपूर्वक करते हैं, धर्म मानकर करते हैं। उसी तरह राम ने भी माता–पिता, पत्नी, भाईयों के साथ गृहस्थ जीवन का निर्वाह किया जो अनुकरणीय है। यह बात विद्यार्थियों में सम्प्रेषित करने के लिए हमें प्रयास करना चाहिए।

2.0 संदर्भ सूची :

1. मैनी धर्मपाल, मानव मूल्य परक शब्दावली का विश्वकोश, स्वरूप एण्ड सन्ज, नयी दिल्ली, (2005) प्रथम खण्ड, पृ.280
2. श्री वाल्मीकि रामायण किष्किन्धा काण्ड, षष्ठ सर्ग 20। 22–23
3. मैनी धर्मपाल, मानव मूल्य परक शब्दावली का विश्वकोश, चतुर्थ खण्ड, पृं. 1396
4. रामानन्द सागर कृत धारावाहिक रामायण भाग 36
5. श्री वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड , 2। 12। 16–17
6. श्री वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड 2। 18। 28–29
7. श्री वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड 2। 21। 30,
8. रामानन्द सागर कृत धारावाहिक रामायण भाग 15
9. रामानन्द सागर कृत धारावाहिक रामायण भाग 15
10. रामानन्द सागर कृत धारावाहिक रामायण भाग 67/68
11. श्री वाल्मीकि रामायण, 3। 67। 29
12. रामचरित मानस, बा.का. 208। 3,
13. रामानन्द सागर कृत धारावाहिक रामायण भाग 44
14. रामचरित मानस लं.का. 54। 4
15. श्री वाल्मीकि रामायण, 6। 113। 39–40,45
16. रामानन्द सागर कृत धारावाहिक रामायण भाग 16
17. श्री वाल्मीकि रामायण, 3। 47। 37,42–44
18. रामचरित मानस उ.का. 6ख